वैष्णवोंकी अलौकिकता

वैष्णव लोग कर्मकाण्डीय पाप-पुण्य विचारके अधीन नहीं हैं। वैष्णव लोग कदापि जाति, कुल, समाज आदिकी सीमाओंमें आबद्ध नहीं हैं। भगवदिच्छासे वैष्णव लोग जिस किसी कुलमें, जिस किसी जातिमें आविर्भूत होकर उस-उस कुल और देशको पवित्र कर सकते हैं। पूर्व दिशा जिस प्रकार सूर्यके उदयका कारण या सूर्यका जनक नहीं है, उसी प्रकार कोई भी जाति, कुल या देश वैष्णवोंके आविर्भावका कारण या जनकस्वरूप नहीं है। वैष्णवोंके जनक-जननी नहीं हैं, जन्म-मृत्यु नहीं है, कर्म-काण्डीय जाति-कुल नहीं है। बहिःप्रज्ञा द्वारा चालित प्रापञ्चिक व्यक्ति अक्षज ज्ञानद्वारा जो कुछ दर्शन करते हैं, उसे कर्मकाण्डीय व्यक्तियोंके ऊपर प्रयुक्त करनेपर भी वैष्णवों के ऊपर प्रयुक्त किया नहीं जा सकता। इस-लिए श्रीकृष्णलीलाके व्यास एवं श्री चैतन्य-लीलाके व्यासने समस्वरसे बतलाया है—

१. **न कर्मबन्धनं जन्म वैष्णवानांच विद्यते।'**

(पद्मोत्तर खण्ड)

अर्थात् वैष्णवों का कर्मबन्धन या जन्म आदि नहीं हैं।

२. **'वैष्णवे जाति-बुद्धिर्यस्य नारकी सः।'**

(पद्म-पुराण)

अर्थात् वैष्णवोंके प्रति जिसकी जाति-बुद्धि है, वह नारकी है।

३. **''अतएव वैष्णवेर जन्म-मृत्यु नाइ।**
संगे आइसेन, संगे जायेन तथाइ॥

धर्म, कर्म, जन्म वैष्णवेर कभु नहे ॥'

(चैतन्यभागवत अ० ८।१७३,१७४)

४. "जे पापिष्ट वैष्णवेर जाति-बुद्धि करे।
जन्म जन्म अधम योनिते डूबि मरे ॥
जे ते कुले वैष्णवेर जन्म केने नहे।
तथापिह सर्वोत्तम सर्व शास्त्रे कहे॥"

(चैतन्य भागवत अ० १०।१००,१०२)

५. शोच्य देशे शोच्य कुले आपन समान।
जन्माइया 'वैष्णव' सबारे करेन त्राण ॥
जेइ देशे जेइ कुले वैष्णव अवतरे।
ताँहार प्रभावे लक्ष योजन निस्तरे ॥
जे स्थाने वैष्णवगण करेन विजय।
सेइ स्थान हय अति पुण्यतीर्थमय ॥

(चैतन्य भागवत आ० २।४६—५१)

जाति कुल—सब निरर्थक बुझाइते।
जन्माइलेन नीच कुले प्रभुर आज्ञाते ॥
अधम कुलेते यदि विष्णु-भक्त हय।
तथापिह सेइ से पूज्य सर्वशास्त्रे कय ॥
उत्तम कुलेते जन्म श्रीकृष्ण ना भजे।
कुले तार कि करिबे नरकेते मजे ॥
एइ सब वेद वाक्य साक्षी देखाइते।
जन्मिलेन हरिदास अधम कुलेते ॥
(चैतन्य भागवत आ० १६।२३७-२४०)

ठाकुर हरिदास चारों वर्णोंके बहिर्भूत-यवनकुलमें आविर्भूत होने पर भी परम-पावनकारी एवं पवित्रतम हैं—

'गङ्गा ओ वाञ्छेन हरिदासेर मज्जन।'

पुण्यवान् ब्राह्मण एवं दिव्य सूरि लोग भी हरिदास ठाकुरके स्पर्शकी वांछा करते हैं—

'हरिदास स्पर्श वांछा करे देवगण।'

और भी कहा गया है—

"स्पर्शेर कि दाय देखिलेइ हरिदास।
छिण्डे सर्वजीवेर अनादि-कर्म पाश ॥"

तब वैष्णव विद्वेषी "डङ्क विप्र" या "हरिनदी ग्रामका दुर्जन ब्राह्मण" या "रामचन्द्र खान" का मंगल नहीं होता। सभी व्यक्तियोंका निस्तार है, किन्तु वैष्णवोंमें जाति-बुद्धि करनेवाले वैष्णव-विद्वेषीका निस्तार नहीं है।

श्रीवृन्दावनदास ठाकुर और भी कहते हैं—

हरिदास आश्रय करिबे जेइ जन।
तांरे देखिले ओ खण्डे संसार-बन्धन ॥
सकृत् जे बलिबेक 'हरिदास' नाम।
सत्य सत्य से जाइबेक कृष्णधाम ॥
(चैतन्य भागवत आ० १६वां अ०)

ठाकुर हरिदास चारों वर्णोंके बहिर्भूत मनुष्यकुलमें उत्पन्न न होकर यदि पशु या असुर कुलमें भी उत्पन्न होते, तो भी वे समग्र ब्राह्मणोंके पूज्य हैं। श्रील नरोत्तम ठाकुर, श्रील दास गोस्वामी प्रभु यदि अत्यन्त ऊँचे कुलमें उदित न होकर सर्वापेक्षा नीच कुलमें भी प्रकटित होते, तथापि वे गोस्वामी जगद्-गुरु ही हैं—सारे ब्रह्मज्ञ ब्राह्मणोंके मुकुटमणि गुरुदेव हैं। श्रील झडू ठाकुर भूँइमाली कुलमें, श्रील उद्धारण दत्त ठाकुर सुवर्ण वणिक् कुलमें, श्रील श्यामानन्द प्रभु सद्गोप कुलमें, श्रील बलदेव विद्याभूषण प्रभु खण्डाइत कुलमें आविर्भूत होनेके कारण ही वे लोग तत्त-ज्ञाति या कुलके कोई व्यक्ति नहीं हैं। वर्त्त-

मान शुद्ध भक्ति प्रचारके मूल पुरुष गौरजन ॐ विष्णुपाद श्रील भक्तिविनोद ठाकुर संभ्रान्त आभिजात्यसम्पन्न आद्य वंशमें अवतीर्ण न होकर यदि सर्वापेक्षा हीन कुलमें भी आविर्भूत होते, या गौड़मण्डल में ही क्यों, भारतवर्षके पाण्डव परित्यक्त, गङ्गा-हरिनाम विवर्जित किसी देशमें अवतीर्ण होते, यदि कामेस्काट्का या लेपलेण्ड प्रदेशमें भी उदित होते, तथापि उनकी ऐकान्तिक वैष्णवताके कारण वे देश-काल-जाति या वर्णसे अतीत हैं, कर्मकाण्डीय विचारसे अतीत हैं, सभी प्रकारके अक्षज प्रापंचिक विचारसे अतीत राज्यमें अवस्थित हैं—

"स च पूज्यो यथाह्यहम् "

वे स्वयं भगवानके अभिन्न कलेवर, एवं भगवानकी तरह ही पूज्य हैं । वे श्रील व्यासदेव और आचार्य श्रील जीव गोस्वामी प्रभुपादके विचारसे—

ब्राह्मणानां सहस्रेभ्यः सत्रयाजी विशिष्यते ।
सत्रयाजी सहस्रेभ्यः सर्ववेदान्तपारगः ।।
सर्ववेदान्तविस्कोट्या विष्णुभक्तो विशिष्यते ।
वैष्णवानां सहस्रेभ्यः एकान्त्येको विशिष्यते ।।
(श्रीभक्तिसन्दर्भ १११ संख्याधृत गारुड़वचन)

अर्थात् सहस्र ब्राह्मणोंकी अपेक्षा एक याज्ञिक ब्राह्मण श्रेष्ठ है, सहस्र याज्ञिक ब्राह्मणोंकी अपेक्षा एक सर्ववेदान्त-शास्त्रज्ञ ब्राह्मण श्रेष्ठ है, एक कोटि वेदान्त पारदर्शी ब्राह्मणोंकी अपेक्षा एक वैष्णव श्रेष्ठ है । ऐसे सहस्र वैष्णवोंमें से एक एकान्ती अर्थात् सर्वक्षण विष्णुको छोड़कर एक मुहूर्त्तके लिए कर्म, ज्ञान, योग या अन्याभिलाषादि या अन्य देवताओंकी उपासना नहीं करते, ऐसे शुद्ध वैष्णव श्रेष्ठ हैं । श्रील जीव गोस्वामी

प्रभुने श्रीहरिभक्तिविलास ग्रन्थमें पाद्मवचन उद्धारपूर्वक बतलाया है—

महाकुलप्रसूतोऽपि सर्वयज्ञेषु दीक्षितः ॥
सहस्रशाखाध्यायी च, न गुरुस्यादवैष्णवः ॥
विप्रक्षत्रियवैश्याश्च गुरवः शूद्रजन्मनाम् ।
शूद्राश्च गुरवस्तेषां त्रयाणां भगवत्प्रियाः ॥

अर्थात् महान् कुलमें उत्पन्न होकर भी, सर्व यज्ञोंमें दीक्षित होने पर भी या वेदोंके सहस्रों शाखाओंके अध्ययन करने पर भी अवैष्णव होने पर गुरु नहीं है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य—इन तीनों वर्णोंके व्यक्ति शूद्रोंके गुरु हैं। शूद्र लोग भगवानके भक्त होने पर उक्त तीनों वर्णोंके गुरु हैं।

श्रील नरोत्तम ठाकुर, श्रील श्यामानन्द प्रभु आदिने इन सभी वाक्योंका आचरण कर प्रचार किया है। जगत-उद्धारके लिए यवन कुलमें अवतीर्ण श्रील हरिदास ठाकुरने आभिजात्यसम्पन्न कुलीनग्रामी सत्यराज खान आदिके आचार्यका कार्य कर उक्त शास्त्र वाक्योंका प्रचार एवं मर्यादा-संरक्षण किया है। श्रील दास गोस्वामी प्रभु षड्-गोस्वामीके अन्यतम रूपमें श्रीमन्महाप्रभु द्वारा जगतमें प्रतिष्ठित रहकर सारे वैष्णव जगतके आचार्यगुरुके रूपमें नित्य पूजित और नमस्कृत हो रहे हैं।

वैष्णव लोग तुच्छ पाप या पुण्यफलसे किसी भी नीच या उच्च जातिमें आविर्भूत नहीं होते। परन्तु भगवदिच्छासे दूसरे जीवको

उत्साह प्रदान करने के लिए ही नीच कुलादि में प्रकट होते हैं। आज यदि श्रीरूप-सनातन प्रभु, दास गोस्वामी प्रभु, जीवगोस्वामी प्रभु, राय रामानन्द, शिखि माहिति, नरोत्तम ठाकुर, उद्धारण ठाकुर, श्रील भक्तिविनोद ठाकुर, श्रील जगन्नाथदास बाबाजी महाराज, श्रील गौरकिशोर प्रभु आदि आचार्य वैष्णव-राजगण विभिन्न कुलमें अवतीर्ण होकर कर्म-काण्डीय माहात्म्यमय जातिकुलकी निरर्थकता का प्रचार नहीं करते, भक्तराज खोलाबेचा (केलेके फूल, डंठल आदि बेचनेवाले) श्रीधर आदि यदि प्राकृत ऐश्वर्यकी हेयता और भक्तोंकी अनन्ताद्भुत ऐश्वर्यकी महिमा जगतमें विघोषित नहीं करते, तो अनादि बहिर्मुख कर्मप्रवण जीवोंकी मति भक्ति-भक्त-भगवानके प्रति नहीं लगकर कर्मकाण्डीय नास्तिकता एवं अपराधरूपी कीचड़में और भी प्रबल वेग से डूब जाती।

श्रीमदभागवतमें कहा गया है—

एतदीशनमीशस्य प्रकृतिस्थोऽपि तद्‌गुणैः।
न युज्यते सदात्मस्थैर्यथा बुद्धिस्तदाश्रया॥

(भा० १।११।३३)

प्रकृतिस्थ होकर भी उसके गुणोंके वशीभूत न होना ही ईश्वर अर्थात् समर्थ पुरुषकी ईशिता है। मायाबद्ध जीवकी बुद्धि जब ईशाश्रया होती है, उस समय वह मायाके निकट होने पर भी मायागुणोंसे विकारप्राप्त या संयुक्त नहीं होती।

—जगद्‌गुरु ॐविष्णुपाद श्रील सरस्वती ठाकुर